International Journal of Applied Research 2017; 3(8): 01-02

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 5.2
IJAR 2017; 3(8): 01-02
www.allresearchjournal.com
Received: 01-06-2017
Accepted: 02-07-2017

डॉ. संजीव कुमार
टी. जी. टी. नॉन मेडिकल ,
प्रारम्भिक शिक्षा निदेशालय,
राजकीय माध्यमिक विद्यालय,
रुगडा; जिला सोलन, हि. प्र.

Correspondence
डॉ. संजीव कुमार
टी. जी. टी. नॉन मेडिकल ,
प्रारम्भिक शिक्षा निदेशालय,
राजकीय माध्यमिक विद्यालय,
रुगडा; जिला सोलन, हि. प्र.

भारतीय शिक्षा और राष्ट्रवाद

डॉ. संजीव कुमार

प्रस्तावना

सभ्यता और संस्कृति मनुष्य के जीवन के आधार हैं. भारतीय सभ्यता और संस्कृति ने वैदिक काल से ही सदैव विश्व का मार्ग दर्शन किया है. वर्तमान समय में भी शिक्षाविद इसी बात का प्रयास कर रहे हैं कि भारत जैसे लोकतांत्रिक देश के लिए ऐसी शिक्षा व्यवस्था हो जिसमें बच्चों में विद्यालय काल से ही अपनी सभ्यता, संस्कृति और राष्ट्र से प्यार और लगाव की भावना पैदा हो. राष्ट्रवाद एक जटिल, बहुआयामी अवधारणा है जिसमें आम तौर पर संस्कृति, भाषा, धर्म, राजनितिक लक्ष्य और अपनी सभ्यता में आस्था और परम्पराओं में विशवास होता है. राष्ट्रीयता की भावना किसी राष्ट्र के सदस्यों में पाई जाने वाली सामुदायिक भावना है जो उनके संगठन को मजबूत और सुद्रिड करती है. लेकिन बदलती पृष्ठभूमि और शिक्षा व्यवस्था के कारण राष्ट्रवाद का स्वरुप भी बदलता नजर आ रहा है. आज शैक्षिक संस्थानों में संस्कृति और सभ्यता के नाम पर जो हो रहा है वह हमारी वास्तविक संस्कृति पर अघात है – चाहे वह 'Cultural Evening' जैसे कार्यक्रम हों या देश विरोध की संस्कृति से जुड़े आयोजन. इन सब से हमारी युवा पीढ़ी का मन, दिमाग और शैक्षिक संस्थानों का वातावरण गम्भीर रूप से प्रभावित हो रहा है. शिक्षा व्यवस्था में समुचित बदलाव लाने के लिए हमें शिक्षा के मुख्य उद्देश्यों पर प्राचीन और आधुनिक के सन्दर्भ में अध्ययन करना होगा. यह लेख भारत की प्राचीन और आधुनिक शिक्षा व्यवस्था में निहित उद्देश्यों को उजागर करता है ताकि अधिनिकता के दौर में भी शिक्षा भारत की गरिमा को बढ़ाने और बच्चों को सुसंस्कृत करने वाली हो. निम्नलिखित उद्देश्यों से प्राचीन कालिक और आधुनिक शिक्षा व्यवस्था में अन्तर पता चलता है:

मन और तन की पवित्रता और जीवन की सद्भावना: प्राचीन भारत में बच्चे के मन में पवित्रता और धार्मिक जीवन से सम्बन्धित भावनाओं को विकसित करना शिक्षा का मुख्य उद्देश्य हुआ करता था. बच्चे की शिक्षा उपनयन संस्कार से आरम्भ होती थी. अपने घर और माता-पिता से दूर गुरुकुल में रहकर प्रात: और सायं संध्या करते हुए ईश्वर का गुणगान करना, व्रत धारण करना, अपने त्योहारों को मनाना उसे अध्यात्मिक दृष्टि से सुद्रिड बनती थी. लेकिन वर्तमान शिक्षा में इस तरह की कोई बात नहीं रही है और न ही यह शिक्षा का उद्देश्य है. आज बच्चा बचपन से ही स्वार्थ, अहंकार, क्रोध और ईर्ष्या का दास बन जाता है जो उसका जीवन भर साथ नहीं छोड़ते.

चरित्र का निर्माण और शुचिता: हमारे ऋषि मुनियों का यह मानना था कि केवल पढ़ना-लिखना ही शिक्षा नहीं बल्कि उसमें नैतिकता का विकास कर उसका चरित्र निर्माण करना भी अति आवश्यक है.

मनुस्मृति के अनुसार सदाचारी व्यक्ति को वेदों का ज्ञान भले ही कम हो परन्तु वह उस वेद पंडित से कहीं अच्छा है जिसमें चरित्र की शुचिता न हो. उस समय महापुरुषों के जीवन से बच्चों का चारित्रिक विकास किया जाता था. आज उस शिक्षक का ही चरित्र नहीं जिसने बच्चों को पढ़ाना होता है तो बच्चों का चारित्रिक विकास होना एक कड़ी चुनौती है.

सम्पूर्ण व्यक्तित्व का विकास: इस उद्देश्य प्राप्ति के लिए पुरानी शिक्षा पद्धति में बच्चे में आत्म सम्मान की भावना को विकसित करना आवश्यक समझा जाता था जिसके लिए आत्म – विश्वास, आत्म – निर्भरता, आत्म – रक्षण और आत्म – नियन्त्रण जैसे गुणों को विकसित किया जाता था. इसके आलावा विभिन्न परिस्थितियों में उचित निर्णय लेने की क्षमता, अपने विवेक का सही उपयोग करना सिखाया जाता था. वर्तमान शिक्षा केवल धन और नौकरी प्राप्त करने के लिए ही बच्चे को तैयार करती है जिसमें इन गुणों का अभाव होता है.

नागरिकता और सामाजिकता का विकास: हमारी पहले की शिक्षा व्यवस्था में इस बात पर जोर दिया जाता था कि बच्चा बड़ा होकर अच्छा नागरिक बने जो समाज के लिए उपयोगी हो. इसलिए उसे अपने माता – पिता, बन्धु – बांधवों, पत्नी, पुत्र, के अतिरिक्त देश और समाज के प्रति भी अपने कर्त्तव्यों का पालन करना सिखाया जाता था. इस प्रकार वह अपने साथ – साथ समाज और देश के उत्थान के लिए भी कार्य करते थे. आज की शिक्षा ने बच्चे को पूरी तरह से स्वार्थी बना दिया है.

सामाजिक कुशलता का विकास: इसके अंतर्गत बच्चे को ज्ञान की विभिन्न शाखाओं, व्यवसायों और उद्योगों में प्रशिक्षण दिया जाता था. उस समय का समाज कार्य – विभाजन वाला समाज था जिसके कारण ब्राह्मण और क्षत्रिय रजा भी हुए और शूद्र दार्शनिक भी बने. परन्तु फिर भी सामान्य व्यक्ति के लिए अपने परिवार के व्यवसाय को अपनाना ही उचित होता था. इसी से व्यवसाय की कुशलता में वृद्धि हुई. इसी कारण हमारे समाज में आज भी व्यवसायिक कुशलता पारिवारिक है. तभी पुराणी कलाएं और संस्कृति आज भी जीवंत हैं.

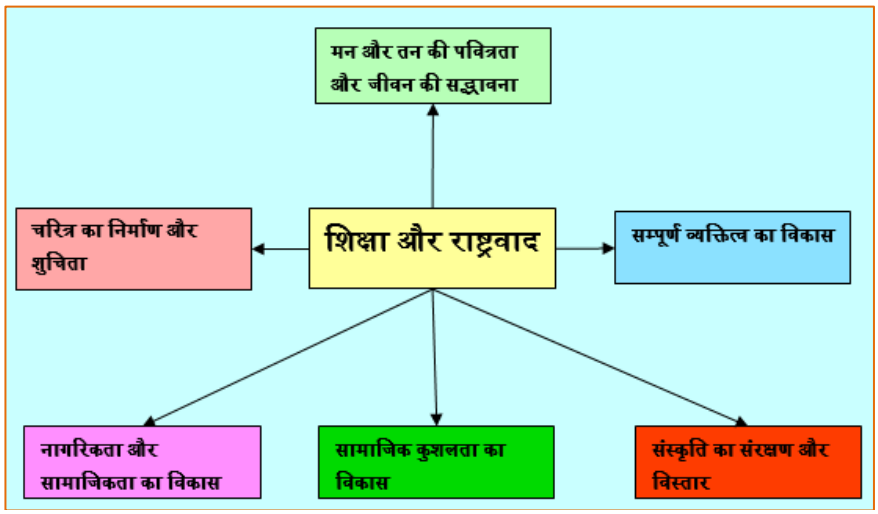

संस्कृति का संरक्षण और विस्तार: राष्ट्र से सम्बधित सम्पति और संस्कृति का संरक्षण करना और उसे विकसित करना उस समय की शिक्षा का उद्देश्य हुआ करता था. हिन्दुओं ने अपने विचार और संस्कृति का प्रचार करने के लिए शिक्षा को ही सबसे उत्तम साधन माना. इसलिए प्रत्येक हिन्दू अपने बच्चे को वही शिक्षा प्रदान करता था जो उसने स्वयं प्राप्त की थी. यह उस समय के आचार्यों की देन है कि आज भी वैदिक कालीन सम्पूर्ण साहित्य हमारे सामने सुरक्षित है. रजा राममोहन राय, स्वामी दयानंद सरस्वती और स्वामी विवेकानन्द ने भी भारतीयों को उनकी संस्कृति की महानता के ज्ञान से अवगत कराया. इन्हीं अनुसंधानों के कारण भारतीयों के मन में एक नया ज्ञान और उत्साह जागृत किया है.

निष्कर्ष यह है कि प्राचीन भारतीय शिक्षा पद्धति इस प्रकार की थी जिसमें भारतीय जीवन और बच्चे के शारीरिक, मानसिक, नैतिक और अध्यात्मिक सभी प्रकार के विकास का व्यापक दृष्टिकोण निहित था. इस शिक्षा व्यवस्था से निकले बच्चे राष्ट्र प्रेमी और सहनशील होते थे. राष्ट्र हित को ही प्राथमिकता हुआ करती थी. वहीं दूसरी ओर आज की शिक्षा व्यवस्था के मुख्य उद्देश्य व्यवसायिक कुशलता की उन्नति करना जिसमें हस्तकला के कार्य पर बल देना है; कुशल नेतृत्त्व की शिक्षा प्रदान करना; उत्पादन में वृद्धि करना; राष्ट्रीय एकता का विकास करना; लोकतन्त्र को सुदृढ़ बनाना और देश का आधुनिकीकरण व तकनीकीकरण करना है.